OM 21 DELHI_Page 1 and 2 14/01/2015 07:53 Page 10

निराधार है अंधेरा...

अंधकार एक प्रतीति है, यह केवल प्रतीत होता है। आधारित् अंधकार वास्तविक नहीं है, आभासी है। यह है भी और नहीं भी। यह है इसलिए क्योंकि आभासी को वास्तविक मान लिया जाता है और यह नहीं है, क्योंकि इसके सघन सम्राज्य को प्रकाश की एक किरण समाप्त कर देती है। अगर ये होता तो इतनी शीघ्रता से समाप्त कैसे होता! अंधकार का डर है, और यही अंधकार हमें बाह्य अंधकार से डरने पर विवश करता है।

आप देखें, बाह्य अंधकार रात्रि होती है, तथा दिन में रात्रि का एहसास देने वाले, भयानक खंडहर, सुरंग एवं घने वन होते हैं। यह प्राय: डराने वाली आहट पैदा करते हैं, देते हैं, परन्तु जब हमारे अंदर डर की कालिमा पसरी होती है तो यह अंधकार और भी भीषण और डरावना लगता है। जब अंदर में भय व्याप्त रहता है तो रात्रि में पेड़ों पर हवा की टकराहट भी हमें भूत-प्रेत, पिशाच आदि का एहसास दिलाती है। ऐसे में पेड़ों का हिलना, सूखे पत्तों का खड़कना हमारी धड़कनों को तेज़ करता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारा मन स्वयं से डरा हुआ है, भयग्रस्त है। डरा हुआ मन डराता नहीं है, डरता है, किसी से भी घबरा उठता है। अंधकार का सामना होते ही भय उत्पन्न करने वाली सैंकड़ों कल्पनाएं करने लगता है।

अंधेरा हमारे जीवन में तमस्, अविद्या और भ्रान्ति का प्रतीक है। अंधकार से भ्रम, भ्रम से अविद्या तथा अविद्या से डर उत्पन्न होता है। इस तमस का आक्रमण पूरे वेग से होता है।

अंधकार का सबसे बड़ा शत्रु प्रकाश एवं सत्य है। सत्य एवं प्रकाश अंधकार के अस्तित्व को विनष्ट कर देता है। इन्हें पूर्णतया विभाजित एवं धूल-धूसरित कर देते हैं। अंधकार खोखलेपन और खालीपन का प्रतीक है। तमस् एवं अंधकार का आधार असत्य एवं अधर्म होता है, जिनका अपना कोई आधार नहीं होता। जैसे अग्नि की एक चिंगारी विस्तृत सूखे वन को जलाकर खाक कर देती है, वैसे ही प्रकाश की एक पतली किरण प्रबल अंधकार के सीने को चीर देती है।

सत्य यही है कि अंधकार आभासी एवं असत्य है और सत्य यथार्थ एवं वास्तविक। हमें डर इसलिए लगता है क्योंकि हम अपने अहंभाव के अंधेरे में निरंतर गोते खाते रहते हैं। यह अहंभाव का परदा कालिमा की तरह हमारे अंतर्चक्षु को ढ़क के रखता है। जब यह परदा हटता है तो हमारी बुद्धि पर सत्य की किरण पड़ती है और अहंभाव का अंधेरा नष्ट होते ही हम वास्तविकता में जीने लग जाते हैं और सत्य की रोशनी से अंधेरा सम्पूर्णत: नष्ट हो जाता है।

जब भी हम कोई कार्य करते हैं तो उस कार्य की जागृति रोशनी या प्रकाश की किरण का प्रतीक है। लेकिन अपने आपको कार्य रूप में ही समझ लेना अंधकार का या तमस् का द्योतक है। कार्य की अनुभूति में ज्यादा रहने से हम अपने आपको कार्य समझने लग जाते हैं, जबकि वास्तविकता इससे भिन्न है। आप कार्य नहीं, आप कार्य करने वाले या यूँ कहें की मैं इस शरीर द्वारा कार्य कराने वाली एक जीवनी शक्ति हूँ। ऐसा एहसास कुछ ऐसी रश्मियाँ प्रदान कर देता जो हमारे मन को अंधकार से निकाल, उस खोखलेपन से पूर्णत: अलग कर देता है। मैं खुश रहने लग जाती हूँ, क्योंकि मैं वो हूँ ही नहीं जो मैं समझती हूँ। यही प्रतीति या एहसास निराधार अंधेरे का प्रतीक है। अब मैं उजाले में पंख फड़फड़ाकर उड़ सकती हूँ।

महापुरुषों को यदि हम एक कतार में खड़ा करके देखेंगे तो पायेंगे कि उनके जीवन की शुरुआत कुछ ऐसे ही तमस् भरी, उलझन भरी, भयग्रस्त कहानियों से शुरु हुई। लेकिन वे आज इतिहास में अमर इसलिए हैं क्योंकि उन्होंने इन कहानियों के मर्म को समझने के लिए अपनी उम्र के कुछ अंश को इसे हटाने में लगाया और ऐसा उठे कि सूरज का प्रकाश भी उनके प्रकाश के स्थान पर फीका पड़ने लगा। लोग जब भी उनकी जीवनी को पढ़ते तो हमेशा उन्हें अपने जीवन के अंधेरे को समाप्त करने का समाधान अवश्य मिल जाता। तो हम भी ऐसे तमस् को हटाने के निमित्त क्यों नहीं बन सकते!

-ब्र.कु. अनुज,दिल्ली

खुशियाँ आपके साथ...

7 कदम राजयोग की ओर...

प्रश्न:- हम सभी धर्म को मानने वाले हैं। परन्तु आज देखा ये जा रहा है कि मनुष्य के कर्म उसके धर्म के अनुकूल नहीं रहे हैं। हम क्या करें जो कर्म धर्म के साथ जुड़ जाएं?

उत्तर:- धर्म ने मनुष्य को श्रेष्ठ कर्म सिखाये। धर्म था ही मनुष्य के कर्म पर अंकुश लगाने के लिए। परन्तु समय बीता, मनुष्य में गिरावट आई क्योंकि उसने धर्म का अनुसरण करना बंद कर दिया। परिणामत: धर्म मंदिरों तक सीमित रह गया या ग्रन्थों में सिमट गया। सभी धर्मों का यही हाल हुआ। इस कारण से मनुष्य के पास धर्म का बल नहीं रहा। अब पुन: आवश्यकता है कर्म को धर्म से जोड़ने की। धर्म मनुष्य को पवित्रता सिखाता है, मन की शुद्धि व श्रेष्ठ आचरण सिखाता है तो किसी आयु तक उसे संयमित जीवन जीना ही चाहिए। चार विशेष कर्म जीवन में ले आये तो धर्म के साथ कर्म भी जुड़ जाएगा। सबको सुख देना, ईमानदारी से कार्य व्यवहार करना, मुख से मृदु व नम्रतापूर्ण वचन बोलना तथा लोभ व इच्छाओं का गुलाम न होना। इन श्रेष्ठ कर्मों को जीवन में अपनाने से पुण्य कर्मों का खाता बढ़ता रहेगा और धर्म के बहुत से उपदेश स्वत: ही जीवन में आ जाएंगे। इसके विपरीत यदि मनुष्य अति विषय वासनाओं में रहता है, यदि वह पाप कर्मों में प्रवृत्त रहता है, यदि वह दूसरों का धन हड़पता है और यदि वह दूसरों को सताता है, तो वह धर्म का अनुयायी नहीं है। कर्म, धर्म के साथ जुड़ जाए इसके लिए परमात्मा से योगयुक्त होकर शक्ति लेना भी आवश्यक है।

प्रश्न:- बाबा हमेशा कहते हैं, कर्म करते हुए कर्म से न्यारे रहो। क्या यह सम्भव है -यदि हाँ तो कैसे?

उत्तर:- मनुष्य निरंतर कर्म कर रहा है। प्रत्येक कर्म उस पर अपना प्रभाव डाल रहा है, यों कहें कि कर्म उसे बाँध रहे हैं अर्थात वह कर्मबंधन में जकड़ता जा रहा है, परन्तु हमारा लक्ष्य है - कर्मातीत होना। कर्मातीत स्थिति का अर्थ है कर्म के प्रभाव से मुक्त रहना व कर्म के परिणाम के प्रभाव से भी मुक्त रहना। परन्तु यदि हम देहभान में रहकर कर्म करते हैं तो हमारे कर्म हमारे लिए बंधन का काम करते हैं जबकि आत्मिक स्थिति में रहकर किये जाने वाले कर्म दिव्य कर्म कहलाते हैं और ऐसे कर्म जीवन को दिव्य बनाने वाले हैं। हम ऐसे ढंग से कर्म करें कि हमें कर्मोपरांत यह लगे कि मानो हमने कुछ भी नहीं किया। यही आत्मा की निर्लिप्त स्थिति है। इसे ही कह दिया है कि आत्मा निर्लेप है। आत्मा निर्लेप नहीं है बल्कि यह उसकी सम्पूर्ण योगयुक्त स्थिति है। कर्म करने से पूर्व हम जिस स्मृति में होते हैं उसके वायब्रेशन्स पूरे कर्म को प्रभावित करते हैं। हमारी स्मृति ही हमारी स्थिति का निर्माण करती है। इसलिए हमारे कर्म दिव्य व अलौकिक हों, तो कर्म से पूर्व इस तरह अभ्यास करें।

प्रथम -यह संकल्प नेचुरल कर दें कि मेरा हर कर्म परमात्म-अर्थ है। मैं अपने या परिवार के लिए कर्म नहीं कर रहा हूँ। बाबा से बातें करें -बाबा मेरा हर कर्म तुम्हारे लिए है। द्वितीय -अपने कर्मों को प्रभु अर्पण कर दें। कर्म के परिणाम को भी प्रभु अर्पण करें। चाहे परिणाम अच्छा हो या बुरा, महिमा हो या ग्लानि, हार हो या जीत, सब प्रभु अर्पण ....।

तृतीय -अभ्यास करें कि मैं आत्मा इन कर्मेन्द्रियों से कर्म करा रही हूँ और बाबा हजार भुजाओं सहित मेरे साथ है। कभी यह अभ्यास करें कि मैं मास्टर सर्वशक्तिवान हूँ या मैं एक महान आत्मा हूँ। कभी परमात्म स्वरूप पर बुद्धि को स्थिर करके कर्म करें। ऐसा करने से कर्म करते भी न्यारेपन की अनुभूति होती रहेगी।

प्रश्न:- हमारे यहाँ एक स्लोगन लिखा रहता है कि स्वयं को बदलो तो जग बदलेगा। इसका क्या अर्थ है और क्या एक व्यक्ति के बदलने से विश्व बदल जायेगा?

उत्तर:- देखने में तो ऐसा ही लगता है कि अकेला चना क्या भाड़ फोड़ेगा। एक व्यक्ति अच्छा बन भी जाए तो इससे क्या होता है। परन्तु सत्य कुछ और है। आपको यह जानना चाहिए कि ये महावाक्य किसने किसको कहे! हम बता दें -स्वयं भगवान ने देवकुल की महानात्माओं के लिए ये वचन उच्चारे। वे आत्माएं इष्टदेव, देवी हैं और पूर्वज हैं। उन एक-एक महानात्माओं से लाखों महानात्माएं जुड़ी रहती हैं। उनका परिवर्तन उन लाखों आत्माओं को परिवर्तित कर देता है। वे ही इस कल्पवृक्ष के मास्टर बीज भी हैं। उनका परिवर्तन विश्व की अनेक आत्माओं पर प्रभाव डालता है। इस तरह यह कार्य चलता है। देखिए एक घर में जो परिवार का बड़ा होता है, उसकी स्थिति का प्रभाव सब पर पड़ता है। यदि वह क्रोधी है, कटुभाषी है तो परिवार पर उसका बुरा प्रभाव देखा जा सकता है। इसी तरह जो सृष्टि के बड़े हैं, पूर्वज हैं, उनका प्रभाव भी पूरी सृष्टि पर पड़ता है।

प्रश्न:- हमारे सेवाकेन्द्र के मकान को किसी ने बड़ी ही चालाकी से अपनी पत्नी के नाम करा लिया है। हमें इन बातों का इतना ज्ञान नहीं था, उसने हमारे भोलेपन का फायदा उठाया। हम इसमें क्या योग का प्रयोग करें?

उत्तर:- अवश्य ही उस व्यक्ति के मन में पाप आ गया है। संसार में पाप अति बढ़ता जा रहा है। अपने ही अपनों को धोखा दे रहे हैं। सम्पत्ति ने तो अनेकों के मन को पाप से भर दिया है। अब थोड़े ही समय में ऐसे पापी बड़ा कष्ट पायेंगे और जो भगवान को धोखा देने की सोच रहे हैं वे तो स्वयं के लिए रसातल जाने का मार्ग बना रहे हैं। सम्पत्ति आने वाले समय में मनुष्य को ज्यादा कष्ट देगी। विनाशकाल में सुखी वही रहेंगे जिन्होने अपनी सम्पत्ति को पुण्यों में बदल दिया होगा। आप डरें नहीं, आप भोले हैं तो भोलानाथ आपके साथ है। भगवान क्योंकि परम सत्य है, इसलिए उसे केवल सत्य ही स्वीकार्य है। आप सच्चे मन से उन्हें क्षमा कर दें और इक्कीस दिन योग करें, एक घण्टा प्रतिदिन। योग से पहले दो स्वमान याद करें - मैं मास्टर सर्वशक्तिवान हूँ व विघ्न विनाशक हूँ। इससे सेवा में आया यह विघ्न नष्ट हो जाएगा।

Contact e-mail - bksurya8@yahoo.com